International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2025; 2(4): 67-70
© 2025 IJMH
www.themultijournal.com
Received: 31-07-2025
Accepted: 09-08-2025
Publish : 11-08-2025

प्रो. मधुबाला सिंह
एम. फिल.,पीएच.डी., प्रोफेसर,
पूर्व विभागाध्यक्षा,संस्कृत विभाग,
मिराण्डा हाऊस महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Correspondence:
प्रो. मधुबाला सिंह
एम. फिल.,पीएच.डी., प्रोफेसर,
पूर्व विभागाध्यक्षा,संस्कृत विभाग,
मिराण्डा हाऊस महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

भारतीय शाब्दबोध परम्परा में आकाङ्क्षा

प्रो. मधुबाला सिंह

शोधशब्द – आकाङ्क्षा, अनुभावकता, निराकाङ्क्ष, नियामक, तात्पर्य।

शोधसार – शाब्दबोध की प्रक्रिया में शाब्दबोध के प्रति करण (पदज्ञान) का जितना महत्त्व है उतना ही शाब्दबोध के सहकारी कारणों का है। वाक्यस्थ पदों में योग्यता, आकाङ्क्षा, आसत्ति और तात्पर्य इन चारों का ज्ञान शाब्दबोध के प्रति सहकारी कारण के रूप में आवश्यक होता है। वाक्य में आसत्ति के माध्यम से पद परस्पर अन्वय हेतु निकट हो जाते हैं। अनन्तर वाक्य में एक पद जब अन्य पद के बिना अर्थ का बोध न करा पाये, तब वाक्यार्थ बोध हेतु एक पद को अपर पद की अपेक्षा होती है, यह अपेक्षा ही दर्शन में आकाङ्क्षा कहलाती है। इस प्रकार आकाङ्क्षा एक विशेष प्रकार की अपेक्षा है जो वाक्य के घटक पदों में परस्पर होती है। वाक्य के ये घटक पद कारक पद तथा क्रिया पद होते हैं, इसलिए क्रिया पद तथा कारक पदों में परस्पर अपेक्षा होती है। इस प्रकार शाब्दबोध के प्रति आकाङ्क्षा की सहकारी कारणता अनिवार्य रूप से व्याख्यायित है।

न्यायदर्शन के अनुसार सार्थक '**पद-समूह**' को '**वाक्य**' कहते हैं। वाक्य दो प्रकार के होते हैं वैदिक तथा लौकिक। सामान्य लोकव्यवहार में प्रयुक्त सार्थक पद-समूह लौकिक वाक्य कहलाते हैं। संहिता एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में प्रयुक्त वाक्य वैदिक वाक्य कहे जाते हैं।

न्यायसूत्र में वाक्य इस अर्थ में **शब्द** का प्रयोग मिलता है- **आप्तोपदेश: हि शब्द:** ।[1] यहाँ **शब्द** का प्रयोग **वाक्य** अर्थ में किया गया है। यहाँ उपदेश शब्द से व्यवहार अथवा प्रवृत्ति को बताया गया है। भाष्यकार वात्स्यायन ने भी उपदेश पद की यही व्याख्या की है।[2] **नव्यनैयायिकों** में गङ्गेश उपाध्याय, लौगाक्षी भास्कर तथा अन्नम्भट्ट ने भी 'पद-समूह' को 'वाक्य' कहा है।[3] नैयायिकों ने उन्हीं वाक्यों को प्रामाणिक स्वीकार किया है जिन वाक्यों में **आकाङ्क्षा, योग्यता** व **सन्निधि** अनिवार्य रूप से हो। इससे इतर वाक्यों को नैयायिक प्रामाणिक नहीं मानते हैं।

नव्यनैयायिकों ने **प्राचीन नैयायिकों** की अपेक्षा वाक्य-स्वरूप पर अपेक्षाकृत सूक्ष्मतर चिन्तन उपस्थित किया है। **प्राचीन नैयायिकों** ने पद-समूह को ही वाक्य माना। जबकि **नव्य नैयायिकों** ने इसके साथ आकाङ्क्षा, योग्यता एवं सन्निधि को वाक्य का अनिवार्य तत्त्व स्वीकार किया। वाचस्पति मिश्र इसी सन्दर्भ में **न्यायवार्तिकटीका** में वाक्यार्थ-बोध के लिए आकाङ्क्षा, योग्यता तथा सन्निधि का भी वर्णन करते हैं।[4]

इसीलिए न्यायसिद्धान्तमुक्तावली के शब्दखण्ड में शाब्दबोध के चार कारण बताये गये हैं- **आसत्ति, योग्यता, आकाङ्क्षा** तथा **तात्पर्य**।[5] उपर्युक्त कारणों में से सभी नैयायिकों ने इन चारों को शाब्दबोध में कारण नहीं माना है। कुछ **नैयायिक** इन सभी को शाब्दबोध में कारण स्वीकार करते हैं तथा कुछ प्रारम्भिक तीन को ही स्वीकार करते हैं। उदाहरण के लिए **तर्कसङ्ग्रह** के रचनाकार **अन्नम्भट्ट**

आकाङ्क्षायोग्यतासन्निधिश्च वाक्यार्थज्ञाने हेतुः।[6]' ऐसा कहकर आकाङ्क्षा, योग्यता तथा सन्निधि को ही वाक्य के अर्थ में हेतु मानते हैं, तात्पर्य को कारण नहीं मानते हैं।

मुक्तावलीसङ्ग्रह के रचयिता आचार्य **पञ्चानन शास्त्री** ने भी न्यायसिद्धान्तमुक्तावली के अनुसार वाक्यार्थ या शाब्दबोध में आसत्ति, योग्यता, आकाङ्क्षा तथा तात्पर्य का ज्ञान आवश्यक माना है।

प्रस्तुत शोधपत्र में शाब्दबोध के सहकारिकारणों में से एक आसत्ति को न्यायशास्त्र दृष्ट्या विशेष रूप से न्यायसिद्धान्तमुक्तावली की अन्यतमा टीकाओं में से एक पञ्चाननशास्त्रिविरचित मुक्तावली-सङ्ग्रह टीका के अनुसार विस्तार से बताया जाएगा।

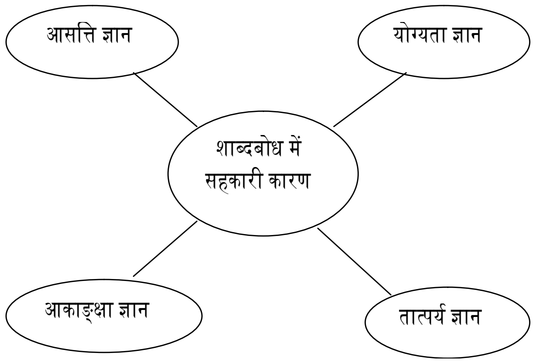

शब्द के स्वरूप की स्पष्टता के लिए **न्यायसूत्र** में आचार्य गौतम ने शब्द का लक्षण किया है- '**आप्तोदेशः शब्दः**'[7] इस लक्षण में प्रयुक्त 'शब्द' से यहाँ अभिप्राय वाक्य से है। शास्त्र में वाक्यार्थ के प्रति आकांक्षा, योग्यता, आसत्ति तथा तात्पर्य को कारण माना गया है। **प्राचीन वैयाकरणों** के द्वारा भी संयुक्त अर्थ की स्पष्टता के लिए परस्पर सम्पृक्त होने के सामर्थ्य का वर्णन किया गया है। यह विवरण समास प्रकरण में प्राप्त होता है।[8]

❖ मीमांसा-मत

आकाङ्क्षा विचार का सर्वप्रथम चिन्तन मीमांसा दर्शन में प्राप्त होता है। **मीमांसासूत्र** में महर्षि **जैमिनि** ने वाक्य के लक्षण में आकाङ्क्षा को मुख्य तथा प्रथम स्वीकार किया है। **मीमांसकों** के अनुसार साकांक्ष शब्दों के अन्वय से वाक्यार्थ का बोध होता है। यथा - '**गामानय**' इस वाक्य में यदि मात्र '**गाम्**' पद का उच्चारण किया जाए तथा '**आनय**' पद अनुच्चरित रहे तब अन्वय बोध नहीं होगा। इसी प्रकार आनय पद उच्चरित हो और 'गाम्' पद का उच्चारण न हो तब भी अन्वयबोध सम्भव नहीं है। अर्थात् आकाङ्क्षा युक्त वाक्य से ही वाक्यार्थबोध होता है। क्रियापदों को कारकपदों की एवं कारकपदों को क्रियापदों की आकाङ्क्षा होती है।

प्रकरणपञ्चिका के अनुसार क्रिया पद और कारक पद अविनाभाव रूप से जुड़े होने के कारण उनमें परस्पर आकाङ्क्षा होती है। प्रकरणपञ्चिकाकार कारकपदों में भी परस्पर आकाङ्क्षा को स्वीकार करते हैं। इसका तर्क यह है कि एक क्रिया पूर्ण होने में अनेक कारकों की आवश्यकता होती है। अतः एक कारक को वाक्यार्थबोध हेतु अन्य कारकों की भी अपेक्षा होती है। यथा 'गामानय; वाक्य कहने पर क्रिया पद एवं कारक पद दोनों उपस्थित होने पर भी यह वाक्य करण कारक न होने से पूर्ण नहीं है। इसे सुनकर श्रोता को जिज्ञासा होती है, 'केन आनय?' तब करण कारक का अध्याहार होता है 'दण्डेन गामानय।' तत्त्वबिन्दुकार वाचस्पति मिश्र के अनुसार बोध करने वाले की जिज्ञासा ही आकाङ्क्षा कहलाती है।[9]

❖ न्यायमत

नव्य नैयायिक आचार्य जगदीश तर्कालंकार के अनुसार आकांक्षा आदि से युक्त पदों का समूह वाक्य कहलाता है।[10] प्रस्तुत लक्षण में आकांक्षा आदि का कथन अनिवार्य है, यदि ऐसा न हो तो वाक्य का लक्षण अपूर्ण रहेगा। वस्तुतः शाब्दबोध के प्रति आकांक्षा, योग्यता तथा सन्निधि तीनों ही सहकारि कारण होने से इनमें से किसी एक का भी अभाव होने पर किसी भी पदसमूह से वाक्य के अर्थ का बोध नहीं हो पायेगा। **शब्दशक्तिप्रकाशिका के रचनाकार आचार्य जगदीश तर्कालंकार** ने लिखा है कि आकांक्षा, धातु, प्रातिपदिक तथा विभक्ति-प्रत्यय के लिए एक आनुपूर्वी धर्म है। यथा किसी शब्द में उसी शब्द के अर्थ के अन्वयबोध की आकांक्षा रहती है, उस अर्थ में उन्हीं पदों अथवा शब्दों का समूह वाक्य के रूप में स्वीकार्य होता है।[11] आचार्य उदयन ने जिज्ञासा की योग्यता को आकाङ्क्षा कहा है। शाब्दबोध के उत्पन्न न होने पर ही जिज्ञासा उत्पन्न होती है, अतः जिज्ञासायोग्यता ही आकाङ्क्षा है।[12]

एक अन्वित अर्थ का बोध नहीं करवा पाने पर शब्दों अथवा पदों का समूह वाक्य नहीं कहलाता है। यथा '**गौरश्वः पुरुषो हस्ती**' यहाँ पदों का समूह उपस्थित है किन्तु यह समूह वाक्य नहीं है। इन पदों के समूह में पदों में परस्पर आकांक्षा का अभाव ही वाक्य न होने का कारण है। क्योंकि यहाँ गो पद कहने पर अश्व पद की आकांक्षा नहीं उत्पन्न होती और अश्व कहने पर पुरुष पद की आकांक्षा नहीं होती है। ये सभी पद परस्पर निराकांक्ष (आकांक्षा रहित) हैं।

नव्यनैयायिकों में आचार्य **गङ्गेश उपाध्याय** का मत है कि दो पदों में से एक पद के बिना दूसरा पद अर्थ का बोध कराने में सक्षम नहीं है। अर्थबोध कराने के असामर्थ्य का कथन ही आकाङ्क्षा है। इसी को **गङ्गेश उपाध्याय** के द्वारा **तत्त्वचिन्तामणि** में '**अभिधानपर्यवसानम्**' कहा गया है।[13] तत्त्वचिन्तामणिकार आचार्य गङ्गेश उपाध्याय मीमांसा के अविनाभाव मत को अस्वीकार करते हैं, इनके अनुसार पदों में अविनाभाव को आकाङ्क्षा नहीं कहते, क्योंकि 'नीलं सरोजम्' इत्यादि वाक्यों में इसका अभाव है। सरोज नील वर्ण का न होने पर भी सरोज हो सकता है।

- **लक्षण-व्याख्या**

न्यायसिद्धान्तमुक्तावली में वाक्यार्थ-बोध हेतु आकाङ्क्षा, योग्यता, आसत्ति तथा तात्पर्य इत्यादि के ज्ञान को कारण माना गया है ।[14] आकाङ्क्षा, योग्यता आदि इन चार सहकारि कारणों से युक्त पदों के समूह को वाक्य कहते हैं। आचार्य विश्वनाथ द्वारा न्यायसिद्धान्तमुक्तावली में आकाङ्क्षा का लक्षण इस प्रकार किया गया है- **"यत्पदेन विना यस्याननुभावकता भवेत् ।"**[15] जिस पद के बिना जिसकी अनुभावकता (अनुभव करना) न हो वह उस पद की आकाङ्क्षा है । अभिप्राय यह है कि एक पद के अर्थ का ज्ञान होने पर ही हमें अपर शब्द के श्रवण और उसके अर्थ को जानने की आकाङ्क्षा होती है । एक पद से दूसरे पद के अभाव में अर्थ का बोध नहीं हो सकता । पदों के साकाङ्क्ष न होने पर वाक्य के अर्थ का बोध कदापि सम्भव नहीं है ।

वाक्य में क्रियापद के बिना कारक पद के अन्वय का बोध नहीं होता है क्योंकि वाक्य में कारक पद को किसी न किसी क्रियापद की सदैव आकाङ्क्षा होती है। वास्तव में क्रियापदों तथा कारक पदों का सन्निधान आसत्ति से ही होता है ।[16] 'घटम्' इस पद में घट की कर्मता का ज्ञान होने के लिए घट के बाद द्वितीया (विभक्ति के अस्तित्व की अपेक्षा) विभक्ति स्वरूप आकाङ्क्षा का ज्ञान अनिवार्य है । इसी प्रकार 'घटमानय' वाक्य न कहकर घट कर्मत्व आनयत्व, कृति इत्यादि कहने पर शाब्दबोध नहीं होता है। इसका कारण है कि इन पदों में परस्पर आकाङ्क्षा का अभाव है।

- **आकाङ्क्षानिर्णय में तात्पर्य की नियामकता**

न्यायसिद्धान्तमुक्तावली में एक उदाहरण प्राप्त होता है **"अयम् एति पुत्रो राज्ञः पुरुषो अपसार्यताम्"**।[17] इस प्रकार के उदाहरण में राजन् शब्द की '**पुत्र**' एवं '**पुरुष**' दोनों शब्दों के प्रति आकाङ्क्षा है । इसलिये यहाँ '**राज्ञः पुरुषः**' ऐसा अनिष्ट अन्वयबोध होने लगेगा ।[18] इसके समाधान में **नैयायिक आचार्यों** का उत्तर है कि आकाङ्क्षा के होने पर भी यहाँ तात्पर्य के न होने के कारण राजन् पद का पुरुष पद के साथ अन्वय नहीं होता और तत्पश्चात् '**राज्ञः पुरुषः**' ऐसा अन्वयबोध उपस्थित नहीं होता है । वक्ता का तात्पर्य यदि इस प्रकार का हो कि राजन् पद का पुरुष के साथ अन्वयबोध हो तब 'राज्ञः पुरुषः' इस प्रकार का अन्वयबोध निश्चित रूप से होगा। अतः तात्पर्य के कारण ही राजन् पद का पुत्र पद से अथवा राजन् पद का पुरुष पद के साथ अन्वयबोध होता है ।[19] इसीलिए अन्वय के बोध में तात्पर्य ही नियामक है, आकाङ्क्षा का ज्ञान नहीं। जिस प्रकार शाब्दबोध के प्रति सहकारी कारणों की अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, उसी प्रकार अन्वयबोध में नियमन की भूमिका उन सभी सहकारी कारणों में से तात्पर्य की होती है, यही नव्य न्यायशास्त्र का मत है

सङ्केताक्षर सूची

अष्टा.	-	अष्टाध्यायी
त.चिन्ता म.	-	तत्त्वचिन्तामणि
त. बि.	-	तत्त्वबिन्दु
तर्क कौ.	-	तर्ककौमुदी
तर्क सं.	-	तर्कसङ्ग्रह
न्या. भा.	-	न्यायभाष्य
न्या.वा.टी.	-	न्यायवार्तिकटीका
न्या.सि.मु.	-	न्यायसिद्धान्तमुक्तावली
न्या.सि.मु.का.	-	न्यायसिद्धान्तमुक्तावली कारिका
न्या.सि.मु.श.ख.	-	न्यायसिद्धान्तमुक्तावलीशब्दखण्ड
न्या.सू.	-	न्यायसूत्र
पृ.	-	पृष्ठ
मी.सू.	-	मीमांसासूत्र
मु.सं.	-	मुक्तावली सङ्ग्रह
मु.सं. श.ख.	-	मुक्तावली सङ्ग्रह शब्दखण्ड
श.श.प्रका.	-	शब्दशक्तिप्रकाशिका
शा.बो.मी.	-	शाब्दबोधमीमांसा

सन्दर्भग्रन्थसूची

1. **न्यायसिद्धान्तमुक्तावली**, विश्वनाथ पञ्चानन भट्टाचार्य, व्या. दयाशङ्कर शास्त्री, सुरभारती प्रकाशन, कानपुर, उत्तरप्रदेश, अप्रैल 1989
2. **मुक्तावलीसङ्ग्रह टीका**, पञ्चानन शास्त्री, द्वितीय संस्करण, सम्पा. गजेन्द्र चतुष्पादी चौखम्बा संस्कृत सिरीज ऑफिस, वाराणसी, 1885
3. **अर्थसङ्ग्रह**, लौगाक्षी भास्कर, व्या. वाचस्पति उपाध्याय, (अर्थालोक संस्कृत टीका सहित) चौखम्बा पब्लिशर्स, वाराणसी, 2005
4. ***तत्त्वचिन्तामणि*, शब्दखण्ड भाग-१** गंगेशोपाध्याय, (रहस्य टीका सहित- मथुरानाथ सहित) पं. कामाख्यानाथ,) एशियाटिक सोसाइटी ओफ बंगाल, 1887
5. ***तत्त्वचिन्तामणि*, शब्दखण्ड भाग-२** गंगेशोपाध्याय, (रहस्य टीका सहित- मथुरानाथ सहित) पं. कामाख्यानाथ, एशियाटिक सोसाइटी ओफ बंगाल, 1901

6. ***तत्त्वबिन्दु***, वाचस्पति मिश्र, व्या. डॉ. बृजकिशोर त्रिपाठी, चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी, 2003
7. **तर्कभाषा**, केशव मिश्र, सम्पा. एस. आर. अय्यर, (अंग्रेजी अनुवाद) चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी, 1971
8. **तर्कसङ्ग्रह**, अन्नमभट्ट, सम्पा. गोविन्दाचार्य, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2010
9. **न्यायदर्शन**, व्या. आ. ढुण्ढिराज शास्त्री, सम्पा. श्री नारायण मिश्र, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी 1970
10. **न्यायसूत्र** (भाष्यसहित), गौतम, सम्पा. विनायक गणेश आप्टे, आनन्दाश्रम मुद्रणालय, पूना, 1922
11. चतुर्वेदी, शारदा, **शब्दविमर्श**, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, 2006
12. तर्कवागीश, फणिभूषण, **न्याय परिचय**, रूपान्तरकर्ता किशोरनाथ झा, सम्पा. डॉ. श्री दिनेशचन्द्र गुह विद्या भवन, वाराणसी, 2014
13. पन्त, गिरीशचन्द्र, **शब्दार्थबोध तथा सङ्केतग्रह सिद्धान्त**, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2014
14. मिश्र, शोभाकान्त, **शब्दार्थतत्त्व**, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 2014
15. मिश्र, रणजीत कुमार, **समासशक्ति तथा शब्दशक्ति**, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2017
16. शास्त्री, गौरीनाथ, **शब्दार्थ मीमांसा**, अनु. श्री मिथिलेश चतुर्वेदी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, विक्रम सम्वत् 2049

संदर्भ ग्रंथ

1. न्या. सू. 1.1.7
2. तथा च सर्वेषां व्यवहारा: प्रवर्तन्त इति। न्या. भा., 1.1.7, पृ. 25
3. वाक्यं पदसमूह:। त. चिन्ता म., पृ. 482
4. न्या. वा. टी., पृ. 174
5. आसत्तिज्ञानं योग्यताज्ञानमाकाङ्क्षाज्ञानं तात्पर्यज्ञानं च शाब्दबोधे कारणम्। न्या. सि. मु., पृ. 409, 410
6. तर्क. सं., पृ. 215
7. न्या. सू. 1.1.7
8. समर्थ: पदविधि:। अष्टा. 2.1.1
9. आकाङ्क्षा च प्रतिपत्तुर्जिज्ञासा। त.बि. पृ. 105
10. मिथ: साकांक्षशब्दस्य व्यूहो वाक्यम्। श. श. प्रका., का. 13, पृ. 63
11. यादृशशब्दानां यादृशार्थविषयिताकान्वयबोधं प्रत्यनुकूला परस्परा-काङ्क्षा तादृशशब्दस्तोम एव तथाविधार्थे वाक्यम्। श. श. प्रका., पृ. 64
12. जिज्ञासायोग्यतैव आकाङ्क्षा। शा.बो.मी. पृ. 408
13. अभिधानपर्यवसानमाकाङ्क्षा यस्य येन विना। न स्वार्थान्वया-नुभावकत्व तस्य पद पर्यवसानम्॥ - त. चिन्ता म., पृ. 208
14. आसत्तिर्योग्यताकाङ्क्षातात्पर्यज्ञानमिष्यते। न्या. सि. मु., का. 82
15. न्या. सि. मु., का. 84, पृ. 81
16. वस्तुतस्तु क्रियाकारकपदानां सन्निधानमासत्त्या चरितार्थम्, न्या. सि. मु., श. ख., पृ. 78
17. न्या. सि. मु., श. ख., पृ. 83
18. नन्वेवमप्ययमेति पुत्रो राज्ञः पुरुषोऽपसार्यतामित्यादावजनिता-न्वयबोधदशायां राजपुत्रयोरन्वबोधानन्तरं द्वितीयक्षणे राज-पुरुषयोरन्वयबोधापत्तिराकाङ्क्षासत्त्वात्। मु. सं., पृ. 227
19. तथा चात्र तात्पर्यज्ञानमेव कदाचित् पुत्रेण कदाचित् पुरुषेण बोधे नियामकम्, न त्वाकाङ्क्षेति भावः। मु. सं., पृ. 227